International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(3): 06-07

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(3): 06-07
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-03-2016
Accepted: 09-04-2016

डॉ. नीरा अरोरा
पी. एच. डी., शोधछात्रा, संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू।

Correspondence
डॉ. नीरा अरोरा
पी. एच. डी., शोधछात्रा, संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू।

"संस्कृत वाङ्मय में प्रायश्चित्त विधान"

डॉ. नीरा अरोरा

वैदिक साहित्य में प्रायश्चित्ति एवं प्रायश्चित्त दो शब्द प्रयुक्त हुए हैं तथा दोनों का अर्थ एक जैसा ही है। [1] प्रायश्चित्त के दो प्रकार माने गए हैं।
(क) यज्ञ की विधि में प्रमाद के गिरने से जो गड़बड़ी होती है, उसके कुप्रभाव को सुधारने के लिए कुछ का प्रयोग होता है।
(ख) कुछ का प्रयोग किसी कृत्य के सहायक भोगों के रूप में, कहने का तात्पर्य यह है कि उनका प्रयोग इसलिए होता है कि व्यक्ति ने जो व्यवस्थित कर्म नहीं किये हैं, उनका समाधान हो जाए। जैसे सूर्योदय हो जाने के बाद भी यदि दैनिक अग्निहोत्र न किये जाए तब प्रायश्चित्त किया जाता है।

प्रायश्चित्त से अभिप्राय

प्रायश्चित्त शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– प्रायः तथा चित्त। प्रायः का अर्थ है विनाश तथा चित्त का अर्थ है एक साथ जोड़ना तथा संधान। प्रायश्चित्त शब्द का सन्धि–विच्छेद प्रयत पवित्र–चित्त (संग्रहित) है। जिसके अनुसार प्रायश्चित्त का अर्थ है ऐसे कार्य जैसे– दान, तप एवं यज्ञ जिनसे व्यक्ति पवित्र हो जाता है। प्रायश्चित्त पाप नाश के लिए प्रयुक्त होता है, इसलिए यह काम्य भी है। [2] मनुस्मृति में स्पष्ट कहा गया है कि जो पापी लोग प्रायश्चित्त नहीं करते, वे परिणाम स्वरूप अगले जन्म में निन्दनीय लक्षणों से युक्त होकर पैदा होते हैं। [3] अतः विवेकशीन मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी शुद्धि के लिए नित्य प्रायश्चित्त करे।

अज्ञानवश तथा क्रोधवश व्यक्ति बहुत बुरे कर्म करता है, किन्तु जब उसका क्रोध शान्त हो जाता है तो वह उस बुरे कर्म को अपने मन में अनुभव करता है, जिस दण्ड को व्यक्ति या राजा नहीं दे सकता, उस दण्ड को मनुष्य के लिए सत्य प्रमाणित होती है। प्रायश्चित्त के द्वारा मनुष्य के मन को शान्ति प्राप्त होती है।

संस्कृत वाङ्मय (साहित्य) के प्राचीनतम ग्रन्थ वेद हैं। 'वेद' शब्द से उस समस्त वाङ्मय का ग्रहण होता है, जिसके अन्तर्गत संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् आदि सभी का समावेश होता है। वेदों में भारतीय संस्कृति, सदाचार, धर्म, दर्शन, ज्ञान–विज्ञान, सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन से सम्बद्ध सभी विषय उपलब्ध हैं। भारतीयों के जीवन दर्शन, आचार–विचार, रहन–सहन, नैतिक एवं सामाजिक चरित, व्यवहार तथा भारतीय संस्कृति के प्राचीनतम रूप एवं विकास एवं मानव जाति का इतिहास समझने के लिए वेद अत्यन्त उपादेय हैं। यही कारण है कि विश्व के इतिहास में वेदों को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

सत् कर्म और असत् कर्म को स्पष्ट करते हुए विद्वानों का मानना है कि वेद–विहित कर्म सत् हैं एवं अन्य असत् हैं। वेदोक्त कर्मों को करने से मनुष्य शुभ फल प्राप्त करता है, अर्थात् पुण्य का भागी बनता है एवं वेदों में जिन कार्यों का निषेध किया गया है, उन कर्मों को करने से मनुष्य पाप का भागी बनता है।

जब कोई मनुष्य निषिद्ध कर्म करता है, तो क्या उसका कोई उपाय भी है? जिस उपाय से वह पाप का भागी न बने। इस बात को स्पष्ट करने के लिए संस्कृत साहित्य में प्रायश्चित्त का विधान किया गया है, अर्थात् भले ही मनुष्य अनिष्ट कार्यों को कर ले, परन्तु यदि वह प्रायश्चित्त करता है तो पाप से युक्त नहीं होता।

पाप को स्पष्ट करते हुए मनुस्मृतकार आचार्य मनु ने दो प्रकार के पापों का उल्लेख किया है। उनका मानना है कि प्रथम पाप वे हैं, जो अनिच्छा से किये जाते हैं, द्वितीय वे जो स्वेच्छा से किये जाते हैं। जो पाप अनिच्छा से किया गया हो, उससे वेदाभ्यास द्वारा निवृत्त हुआ जा सकता है, किन्तु मोहवश किये गये पाप से मुक्ति अनेक प्रकार के प्रायश्चित्त को करने से ही होती है।

प्रायश्चित्त करने वाले मनुष्य की अन्तर्रात्मा और लोक सभी प्रसन्न हो जाते हैं इसलिए मनुष्य को प्रायश्चित्त अवश्य करना चाहिए। जो व्यक्ति प्रायश्चित्त नहीं करता एवं पाप कर्मों में निरत रहता है और अत्यन्त भयंकर एवं कष्टमय नरकों में जाता है। [4]

मनुस्मृति में भी स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जो पापी लोग प्रायश्चित्त नहीं करते वे परिणामस्वरूप अगले जन्म में निन्दनीय लक्षणों से युक्त होकर पैदा होते हैं। अतः विवेकशील मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी शुद्धि के लिए नित्य प्रायश्चित्त करे। [5]

पाप का वर्णन करते हुए आचार्य मनु ने पाप और महापाप का वर्णन किया है। सामान्य पाप चोरी करना, स्वर्ण चुराना, चुगली करना, झूठी निन्दा करना इत्यादि हैं। चार कृत्य महापाप माने जाते हैं –

ब्रह्महत्या, मदिरापान, चोरी व गुरुपत्नी गमन। इन पापों को कराने वालों के साथ कोई सम्बन्ध रखना भी पाप है।

वेदाभ्यास में रत रहने वाले और पंच–यज्ञ क्रिया में तत्पर व्यक्ति को महापातक से उत्पन्न पाप नहीं छूते हैं। [6]

अतः मनुष्य को अपने द्वारा किये गये पापों का प्रायश्चित्त अवश्य करना चाहिए, क्योंकि प्रायश्चित्त न करने पर वह इस जन्म में अपयश का पात्र बनता ही है, साथ ही साथ अगले जन्म में दुराचारी कहलाता है। प्रायश्चित्त करने पर मनुष्य पाप से मुक्त होकर पुण्य का भागी बनता है एवं जन्म मरण के बन्धनों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त करता है। इस प्रकार प्रायश्चित्त विषय पर अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि मनुष्य से यत्र–तत्र छोटे–छोटे पाप तो होते ही रहते हैं। उन पापों का प्रायश्चित्त करके ही वह अपने जीवन को सफल बना सकता है।

प्रायश्चित्त की विधि

प्रायश्चित्तों की विधि के विषय में मदनपरिजात आदि ने विस्तार के साथ वर्णन किया है। किन्तु हम उन्हें यहां उल्लिखित करना अनावश्यक समझते हैं। संक्षेप में विधि यूं है –

प्रायश्चित्त आरम्भ करने के एक दिन पूर्व नख एवं बाल कटा लेने चाहिए, मिट्टी, गोबर, पवित्र जल आदि से स्नान कर लेना चाहिए, घृत पीना चाहिए, शिष्टों की परिषद् द्वारा व्यवस्थित नियमों के पालन की घोषणा करनी चाहिए। दूसरे दिन व्यक्ति को स्नान करना चाहिए, श्राद्ध करना चाहिए, पंचगव्य पीना चाहिए, होम करना चाहिए, सोना, गाय आदि ब्राह्मणों को दक्षिणा में देना चाहिए और उन्हें भोज देना चाहिए। [7]

पराशर का कथन है कि प्रायश्चित्त के उपरान्त पंचगव्य पीना चाहिए तथा प्रायश्चित्त करने वाले ब्राह्माण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र को क्रम से एक, दो, तीन या चार गायें दान देनी चाहिए। प्रायश्चित्त के आरम्भ एवं अन्त में स्मार्त्त अग्नि में व्याहृतियों के साथ घी की आहुतियां देनी चाहिए, श्राद्ध करना चाहिए एवं सोने तथा गाय की दक्षिणा देनी चाहिए। [8]

स्मृतियों ने सिद्धान्त प्रतिपादित किया है कि यदि पापी ने प्रायश्चित्त नहीं किया तो उसे नरक की यातनाएं भुगतनी पड़ेंगी और इसके उपरान्त पापों के अवशिष्ट चिन्ह–स्वरूप उसे कीट–पतंगों या निम्न कोटि के जीव या वृक्ष के रूप में पुनः जन्म लेना पड़ेगा और मनुष्य रूप में जन्म लेने पर उसे रोगों एवं कुलक्षणों से युक्त होना पड़ेगा। [9]

यदि किसी भी जाति का कोई व्यक्ति अनजाने में किये गये पापों के कारण महापातकी हो और उनसे उचित प्रायश्चित्त कर लिया हो तो राजा द्वारा उसके मस्तक पर दाग नहीं लगाना चाहिए, प्रत्युत भारी अर्थ– दण्ड देना चाहिए। महान् पातक का सूचक वह चिन्ह उनको प्रत्येक जन्म में रहता है। किये हुए पाप का पश्चाताप करने वालों को प्रायश्चित्त कर लेने पर वह चला जाता है।

मनु का कथन है कि– "व्यक्ति का मन जितना ही अपने दुष्कर्म को घृणित समझता है, उतना ही उसका शरीर (उसके द्वारा किये गये) पाप से मुक्त हो जाता है। यदि व्यक्ति पाप–कृत्य के उपरान्त उसके लिए अनताप (पश्चाताप) करता है तो वह उस पाप से मुक्त हो जाता है। उस पाप का त्याग करने के संकल्प एवं यह सोचने से कि मैं यह पुनः नहीं करूंगा व्यक्ति पवित्र हो उठता है।"

याज्ञवल्क्य का कथन है कि उन सभी पापों के लिए तथा उन उपपातकों एवं पापों के लिए जिनके लिए कोई विशिष्ट प्रायश्चित्त न निर्धारित हो, एक सौ प्राणायाम नष्ट करने के लिए पर्याप्त है।

रजस्वला स्त्री के द्वारा देखे हुए पदार्थ को खाने से कृमिलोदर हो जाता है। अतः तीन दिन तक गो–मूत्र और यावक का आहार करने से शुद्धि होती है। जो दण्डे के ऊर्ध्व प्रहार से गाय को मार देते हैं, उसका प्रायश्चित्त द्विगुण गोवृत्त करना चाहिए। पराई हंसी उड़ाने वाला काना होता है, वह मोतियों से युक्त गौ का दान करे तो पाप का प्रायश्चित्त होकर विशुद्ध हो जाता है। भोजन, पान, औषधादि के उपहार में जो गौएं मर जावें तो चतुर्थ भाग प्रायश्चित्त करना चाहिए। घण्टा–भरण के दोष से यदि गौ मृत हो जावे तो आधा व्रत प्रायश्चित्त में करें क्योंकि वह तो विभूषित करने के लिये ही किया गया था।

प्रायश्चित्त के समाप्त होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावें। दक्षिणा में गाय या वृष बीस संख्या में देना चाहिए। इस प्रकार प्रायश्चित्त का हमारे जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। हमें शास्त्रानुसार प्रायश्चित्त करके अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाना चाहिए। धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में हर पाप के लिए प्रायश्चित्त का विधान किया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. असावादिव्यो न व्यरोचत तस्मै देवाः प्रायिश्चित्तिमैच्छन्।। तैत्तिरीय संहिता – 2.1.2.4.
2. धर्मशास्त्र का इतिहास भाग – 3 – पृष्ठ संख्या 1044
3. चरित व्यमतो नित्यं प्राश्चितं विशुद्धये। निन्द्येर्हि लक्षणेयुक्ताः जायन्तेऽनिस्कृतं नसः।। मनुस्मृति – 11.53
4. प्रायश्चित्तमकुर्वाणाः पापेषु निरता नराः। अपश्चातापिनः कष्टान्नरकान्यान्ति दारूणान्।। याज्ञवल्क्यस्मृति – 3.221
5. चरित व्यमतो नित्यं प्रायश्चित्तं विशुद्धये। निन्द्येर्हि लक्षणैर्युक्ताः जायन्तेऽनिस्कृतं नसः।। मनुस्मृति – 11.53
6. वेदाभ्यासरते क्षान्त पूचयज्ञक्रियापरम्। न स्मृशन्तीह पापानि महापातकज्ञान्यपि।। याज्ञवल्क्यस्मृति – 3.310
7. धर्मशास्त्र का इतिहास तृतीय भाग – पृष्ठ – 1076
8. क्षत्रियो वाय वैश्यश्चैदर्धकृच्छ्रं च कायिकम्।। पराशरस्मृति– 11.2
9. धर्मशास्त्र का इतिहास तृतीय भाग – पृष्ठ – 1106